CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अमृत भारती

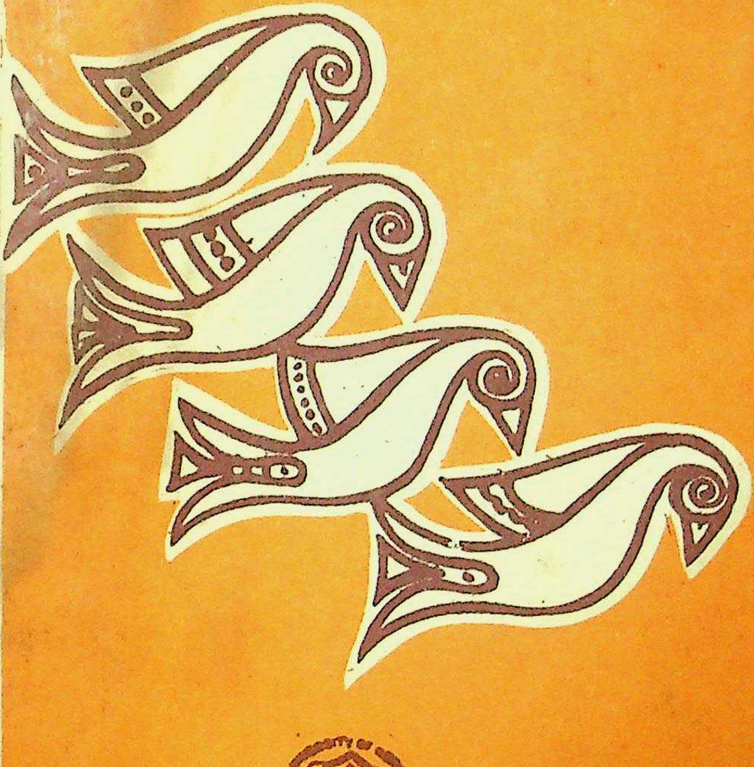

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ATI

ti Nagar, TVM-23

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अ

अमृतभारती

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(HINDI)

AMRITA BHAR...

Poetry Collection

Compiled by
A committee appointed by
University of Kerala

Phototypeset by Akshara Graphix, E-231, Swa 23
Printed at KUMAR PRINTERS, QUILON.

Published 1990

Price Rs. 5/- (Rupees Five Only)

Published by

Dr. A. RAZALUDEEN
Director
Department of Publications
For the University of Kerala

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अमृतभारती

प्रकाशन विभाग
केरल विश्वविद्यालय
तिरुवनन्तपुरम

१९९०

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Members of the Editorial Board

1. Prof. P.K. Ravindranathan Nair. (Chairman)
2. Dr. V.N. Philip. (Convener)
3. Dr. V.P. Mohamed Kunju Methar.
4. Dr. Khaje Meiah.
5. Dr. V.V. Viswam.
6. Prof. P. Gopikuttan.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्राक्कथन

केरल विश्वविद्यालय की ओर से कॉलेजीय स्तर की हिन्दी पाठ्य पुस्तकों को प्रकाशित करने की योजना के अन्तर्गत ' अमृत भारती ' का संकलन प्रकाशित किया जा रहा है। यह संकलन प्री. डिग्री के हिन्दी पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। हिन्दी के प्राचीन तथा आधुनिक काल के कुछ प्रमुख कवियों तथा उनकी कविताओं का संक्षिप्त परिचय देकर हिन्दी साहित्य की ओर विद्यार्थियों को आकृष्ट करना ही इसका मुख्य ध्येय है। पुस्तक चयन समिति की आशा है कि यह संकलन अध्यापकों और विद्यार्थियों को लाभदायक सिद्ध होगा।

हम उन कवियों तथा प्रकाशकों को हार्दिक धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने इस संकलन में अपनी बहुमूल्य कविताओं को संकलित करने की अनुमति दे दी है।

तिरुवनन्तपुरम,
1-6-1990.

संपादक समिति

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय-सूची

1. कबीरदास 9

2. सूरदास 15

3. तुलसीदास 19

4. रहीम 24

5. व्रज देश में सन्ध्या 29
अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध

6. मनुष्यता 31
मैथिलीशरण गुप्त

7. चित्रकूट में श्रीराम 36
जयशंकर प्रसाद

8. प्रियतम 39
सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

9. ग्रामवधू 44
सुमित्रानन्दन पंत

10. अधिकार 48
महादेवी वर्मा

11. चाँद और कवि 51
रामधारी सिंह दिनकर

12. दिन जल्दी-जल्दी ढलता है 54
हरिवंशराय बच्चन

13. मेरा जीवन 57
सुभद्राकुमारी चौहान

14. लोग 60
शंभूनाथ सिंह

15. जीवन रहस्य 64
जगदीशचंद्र जीत

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

1. कबीरदास

कबीरदास हिन्दी साहित्य के भक्ति काल की निर्गुण भक्ति शाखा के सर्वश्रेष्ठ संत कवि थे। उनका जीवन काल चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी के बीच में था। ऐसा माना जाता है कि काशी में उनका जन्म हुआ था। संत, समाज-सुधारक, कवि, मानवप्रेमी इत्यादि कई विशिष्ट गुणों से विभूषित कबीर का व्यक्तित्व अनोखा रहा है। बताया जाता है कि स्वामी रामानन्द के शिष्यत्व में कबीर एक सिद्ध पुरुष बने।

कबीर ने 'मानव-मानव समान' का जो सन्देश प्रसारित किया, उसने पतित-पीडित निर्जीव से पड़े तथाकथित निम्न जातियो में चेतना भर दी। उनमें आत्माभिमान का भाव जगाया। उन्होंने लोगों को बताया कि सत्य पर अडिग रहनेवाले परोपकारी व्यक्ति ही ऊँचे बनते हैं।

साधारणतया भक्त कवि आत्मोत्कर्ष को ही अपना लक्ष्य बनाते हैं। वे लौकिक जीवन के प्रति उदासीन रहते हैं। परंतु कबीर अपने बेजोड़ व्यक्तित्व लिए प्रत्यक्ष होते हैं। वे सामाजिक जीवन की मंगल-कामना केलिए स्वजीवन को समर्पित साधु हैं।

गुरु महिमा, जातिभेद के विरुद्ध आक्रोश,. सत्य-साक्षात्कार, विनय की महिमा, जीवन की क्षणभंगुरता, परोपकार की आवश्यकता, कथनी और करनी के बीच का अंतर मिटाने का आह्वान आदि न जाने कबीर ने कितने विषयों को अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। तपोधन की प्राप्ति में तन-मन से डूबने पर भी वे नित्य जीवन की छोटी-मोटी बातों से अपने को अलग नहीं करते। कबीर ने जो उत्तम विचार रखे वे जनता की ज़बान पर रहते हैं। समाज में प्रचलित कुरीतियों एवं अत्याचारों और अन्धविश्वासों पर उन्होंने वज्रप्रहार

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किया है कबीर ने सत्य को जिस ढंग से खोलकर कहा उस ढंग से किसी और ने नहीं कहा है। यह भी क्या जादू है कि जो उक्ति जहाँ एक ओर तलवार की तरह घाव करती है वहीं दूसरी ओर वह पद–दलितों, पीडितों और घायलों को मरहम बनकर उनकी पीडा और वेदना को शान्त करती है। हिन्दू और मुस्लिम बनकर विपरीत धुवों में खड़े जनों को निकट लाकर दोनों का आराधक बनना क्या मामूली बात है?

कबीर की रचनाएँ साखी, सबद और रमैनियों में विभक्त हैं। दोहे जैसे छोटे छंदों में कबीर ने बड़े महत्व की बातें कही हैं। दोहे के अतिरिक्त 'पद' छन्द में कबीर ने अपनी वाणी कही है। कवीन्द्र रवीन्द्र कबीर से बहुत प्रभावित हुए। आप ने 'दि हन्ड्रेड पोयम्स ऑफ कबीर' नाम से कबीर कविता का भाषान्तर करके उनके प्रति अपना आदर प्रकट किया। आज भी भारतीय समाज की उन्नति चाहनेवाले कबीर के विचारों को प्रयोग में लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। कबीर के विचारों की बढ़ती लोकप्रियता कवि के कालजयी व्यक्तित्व को प्रकट करती है।

कबीर के दोहे

1. गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पाँय।
   बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय॥

2. जाति न पूछो साधु की, पुछ लीजिए ज्ञान।
   मोल करो तलवार का, पड़ा रहने दो म्यान॥

3. जिन ढूँढा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठि।
   हौं बौरी डूबन डरी, रहा किनारे बैठि॥

4. साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
   जाके हिरदे साँच है, ताके हिरदे आप॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

5. लघुता ते प्रभुता मिलै, प्रभुता ते प्रभु दूरि।
चींटी लै शक्कर चली, हाथी के सिर धूरि॥

6. मेरा मुझ में कछु नहीं, जो कछु है सो तेरा।
तेरा तुझ कौं सौंपतां, क्या लागै मेरा॥

7. माली आवत देखि कै, कलियां करी पुकार।
फूली फूली चुन लईं, काल्हि हमारी बार॥

8. तेरा साँई तुज्झ में, ज्यों पुहुपन में बास।
कस्तूरी का मिरग, ज्यों फिरि फिरि ढूँढै घास॥

9. बडा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड खजूर।
पंथी को छाया नाहीं, फल लागैं अति दूर॥

10. कथनी-मीठी खाडँ सी, करनी विष की लोय।
कथनी तजि करनी करै, विष से अमृत होय॥

शब्दार्थ और भावार्थ

1. गोविन्द - ईश्वर, दोऊ - दोनों, काके - किसके, लागूँ पाँय - पैरों पर लगूँ (पूजा करूँ), आपने - आप को, जिन - जिन्होंने, दियो बताय - बता दिया।

गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए कबीरदास कहते हैं कि गुरु और गोविन्द (ईश्वर) दोनों मेरे सामने खड़े हैं। पहले मैं किसके पैरों पर पड़ूँ? अर्थात् मैं किसका प्रणाम करूं? कवि गुरु की ओर देखकर कहते हैं कि हे गुरो ! मैं पहले आपके सामने बलिहारी हो जाता हूँ, क्योंकि ईश्वर को बता देनेवाले तो आप ही हैं।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

2. साधु - सज्जन, संन्यासी, मोल करो - मूल्य करो, पड़ा रहने दो - उपेक्षा करो।

जातिभेद के आधार पर मनुष्य के आदर-अनादर की भावना का विरोध करते हुए कबीरदास कहते हैं कि तुम सज्जनों की जाति मत पूछो। यह जान लो कि उनका ज्ञान कितना है। तलवार का ही मूल्य करो; म्यान को छोड़ दो।

3. जिन ढूँढा - जिन्होंने ढूँढा, तिन पाइयाँ - उन्होंने पाया, हौं - मैं, बौरी - पगली, डूबन डरी - डूबने से डरी, रहा किनारे बैठि - किनारे बैठा रहा।

प्रस्तुत दोहे में कबीरदास यह आशय व्यक्त करते हैं कि गहरे पानी में पैठने से ही मोती मिलता है। ईश्वर को पाने केलिए साधना करनी चाहिए। कबीर कहते हैं कि जिन्होंने ईश्वर को ढूँढा उन्होंने उसे पाया। ईश्वर रूपी मोती को पाने केलिए भक्ति में गोता लगाना आवश्यक हैं। वे कहते हैं कि मैं डूब जाने से बचने केलिए समुद्र-तट पर बैठा रहा। इसलिए मेरे हाथ में कुछ नहीं आया। मुझे खाली हाथ लौटना पड़ा।

4. सांच - सत्य, बराबर - समान, जाके - जिसके, हिरदे - हृदय में, ताके - उसके, आप - ईश्वर।

सत्य की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए कबीर बताते हैं कि सत्य के समान कोई तप नहीं है और झूठ के समान कोई पाप भी नहीं है। जिसके हृदय में सत्य है उसके हृदय में ईश्वर निवास करता है।

5. लघुता - विनय, ते - से, प्रभुता - आदर, प्रभुता - घमण्ड, प्रभु - ईश्वर, धूरि - धूलि।

प्रस्तुत दोहे में कबीरदास विनय की महिमा व्यक्त करते हैं। उनका कहना है कि लघुता से प्रभुता मिलती है और प्रभुता से

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रभु दूर हो जाते हैं। उदाहरण के रूप में कवि चींटी और हाथी को प्रस्तुत करते हैं। चींटी छोटी है विनय के साथ चलती है, इसलिए वह शक्कर लेकर चलती है। हाथी बडा है, घमण्ट के साथ चलता है, इसलिए उसके सिर पर धूल रहती है।

6. कछु – कुछ, सो – वह, कौ – को, सौपतां – सौंपतां – सौंपते हुए लागै मेरा – मुझे लगता है।

प्रस्तुत साखी में पूर्ण आत्मसमर्पण की भावना ही मुखरित होती है। कबीर कहते हैं कि मुझमें मेरा (अपना) कुछ नहीं है, जो कुछ है सो तेरा ही है; तेरा तुझको सौंपने में मेरा क्या लगेगा?

7. आवत – आते, देखिकै – देखकर, करी पुकार – पुकार कर उठी, फूली – विकसित हुई, चुन लई – चुन लो, काल्हि–कल।

सामान्यतया संसार का यह नियम होता है कि यहाँ जो पहले आता है उसे पहले जाना पड़ता हैं। कवि कलियों के उदाहरण से यह समझाते हैं कि माली को आते देखकर कलियाँ पुकार उठती हैं कि जो कलियाँ विकसित हुईं तुम उन्हें चुन लो। कल हमारी बारी आएगी तब हमें भी लेना।

8. साईं – साईं, स्वामी, तुज्झ – तुझ, पुहुपन – पुष्प, बास – सुगंधि, मिरग – मृग, ज्यें – ज्यों, फिरि–फिरि– बार–बार, ढूँढै – ढूँढता है।

ईश्वर की खोज बाहर करनेवाले भक्त को समझाते हुए कबीर कहते हैं, तेरा स्वामी तुझमें निवास करता है जैसे पुष्प में सुगंधि भरी रहती है। मृग की नाभि में कस्तूरी रहती है किन्तु वह उसकी खोज में वन–वन भटकता है। ऐसे ही प्रभु का प्रत्येक मनुष्य के हृदय में निवास है, किन्तु, कोई उसे देख नहीं पाता।

9. खजूर – date palm, पंथी – पथिक, लगे – लगता है।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कबीर कहते हैं कि खजूर के सीधे ऊँचेपन का क्या लाभ है? उसके नीचे थके-हारे पथिकों को विश्राम केलिए छाया तक नहीं मिलती। फल तो इतने ऊँचे पर लगता है कि उसका लाभ सब उठा नहीं सकते।

10. खाँड सी – खाँड के समान, की लोय – के समान, तजि – छोड़कर।

इस दोहे में कबीर बताते हैं कि वाणी की अपेक्षा कर्म श्रेष्ठ है। वे कहते हैं कि कथनी खाँड के समान मीठी है और कर्म विष के समान कड़ुवा है। कवि का उपदेश है कि हमें कथनी छोड़कर कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए तब विष भी अमृत हो जाएगा।

• • • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

2. सूरदास

महाकवि सूरदास का जीवनकाल लगभग 1479–1582 ई. के बीच में माना जाता है। उनका जन्म दिल्ली के निकट सोही नाम के गाँव में हुआ था। परन्तु वे अठारह वर्ष की अल्पायु में ही वीतरागी होकर मथुरा–आगरा के बीच गऊघाट पर आकर रहने लगे।

बचपन में ही वे कृष्ण भक्ति में विभोर होकर पद–रचना करते थे। संगीत में भी उनकी असाधारण रुचि थी। कहा जाता है कि गऊघाट में सूरदास की महाप्रभु वल्लभाचार्य से भेंट हुई और उनकी वात्सल्य तथा सख्य भाव की भक्तिभावना से वे इतने प्रभावित हो गए कि पुष्टिमार्ग में दीक्षित हो गए।

सूरदास का 'सूर सागर' हिन्दी के कृष्ण भक्ति काव्यों का सिरमौर है। बालक कृष्ण को उन्होंने अपना इष्टदेव मानकर उनकी स्तुति की। 'सूर सागर' उनका विशालकाव्य ग्रन्थ है। कहा जाता है कि सूरदास ने एक लाख पदों की रचना की है। मगर 'सूर सागर' में छः हज़ार के लगभग पद ही संकलित किए गए हैं।

स्नेह, वात्सल्य, ममता और प्रेम के जितने भी रूप मानवीय जीवन के मिलते हैं लगभग सभी का सूर ने चित्रण किया है। सागर की तरह विस्तार और गहराई दोनों ही विशेषताएँ सूर के काव्य में मिलती हैं। वात्सल्य को रस कोटि तक पहुँचाने में उन्हें अद्‌भुत सफलता मिली।

'सूर सागर' के महत्वपूर्ण प्रसंग हैं ' विनय ', ' बालकृष्ण ' और ' भ्रमरगीत '। यहाँ अंतिम प्रसंग को छोड़कर शेष दोनों से तीन पद दिए गए हैं। 'विनय' के पद में सूर की भक्ति भावना उमड़ पड़ी है। कवि कृष्ण

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को समदर्शी बताकर अपने उद्धार की विनती करते हैं।

'बालकृष्ण' से उद्धृत दोनों पदों में कृष्ण की बाल लीलाओं का अनूठा चित्र मिलता है। माता यशोदा से तुतली वाणी में बात करने वाले बालक कृष्ण की छवि अतुलनीय है। सच है सूरदास ने बालकृष्ण की क्रीड़ाओं का वर्णन करते हुए वात्सल्य रस की अमृतधारा ही बहाई।

सूरदास की भाषा ब्रज है। संगीत प्रधान पदों में उपमा – अलंकार की छटा भी दर्शनीय है। सूरदास हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कृष्ण भक्त कवि है।

सूरदास के पद

1. प्रभु मेरे औगुन चित न धरो।
समदरसी प्रभु नाम तिहारो अपने पनहि करो॥
इक लोहा पूजा में राखत इक घर बधिक परो।
यह दुबिधा पारस नहिं जानत कंचन करत खरो॥
एक नदिया एक नार कहावत मैलो नीर भरो।
जब मिलिकै दोउ एकबरन भए सुरसरि नाम परो॥
एक जीव एक ब्रह्म कहावत 'सूर' स्याम झगरो।
अबकी बेरि मोहिं पार उतारो नहिं पन जात टरो॥

2. मैया कबहि बढ़ैगी चोटी।
किती बार मोहिं दूध पिवत भई यह अजहूं है छोटी॥
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों ह्वै है लाँबी मोटी।
काढ़त गुहत न्हवावत पोंछत नागिनि सी भुँइ लोटी॥
काचो दूध पिवावत पचि पचि देत न माखन रोटी।
'सूर' स्याम चिरजीव दोउ भैया हरि हलधर की जोटी॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

3. मैं तो चंद खिलौना लइहौं।
जइहौं लोटि धरनि पै अबही, तेरी गोद न अइहौं॥
सुरभी कौ पच-पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहइहौं।
ह्वइहौं पूत नंद बाबा को, तेरौ सुत न कहइहौं॥
'आगे आउ, बात सुनु मेरी, बलदाउहिं न जनिइ हौं।
हँसि समुझावति, कहति जसोमति, 'नई दुलहिया दइ हौं॥'
तेरी सौं मेरी सुनि मइया! अबहि बियाहन जइहौं।
सूरदास ह्वै कुटिल, बराती गीत सुमंगल गइहौं॥

शब्दार्थ और भावार्थ

1. औगुन – अवगुण, चित न धरो – ध्यान न दे, समदरसी – समदर्शी, तिहारो – तुम्हारा, पनहि करो – पार कर दे, इक – एक, राखत – रखा जाता है, बधिक – पशु वध करनेवाला, कंचन करत खरौ – शुद्ध सोना बना देता है, नार – नाला, मैलो नीर भरो – मैले जल से भरा, दोउ – दोनों, एकबरन – एक रंग, सुर सरि – गंगा, झगरो – बिगड़ गया, पन – प्रण, जात टरो – टला जाता है।

हे प्रभु, हमारे दोषों पर आप ध्यान न दें। आप का नाम समदर्शी है, इसलिए (अपनी इस विशेषता का ध्यान रखते हुए हमें भवसागर से) पार कर दीजिए (जिस प्रकार) एक लोहा पूजा (गृह) में रखा जाता है (तथा) दूसरा बधिक के घर में पड़ा रहता है (जिससे वह पशु-वध करता है) किन्तु पारस उनमें भेदभाव नहीं रखता, उन्हें शुद्ध सोना (समान रूप से) बना देता है। (अच्छे जल से भरी) एक नदी तथा मैले जल से भरा एक नाला दोनों मिलकर (गंगा में) एकाकार (एकरंग) के हो जाते हैं. तो उनका नाम (अभिन्न रूप से) गंगा पड़ जाता है। सूरदास कहते हैं कि एक जीव तथा दूसरा ब्रह्म कहा जाता है; वह (उससे) मिलकर (उसके बाहरी दोष से) बिगड़ गया है। हे प्रभु इस बार मुझे भवसागर से पार कर दीजिए, नहीं तो (आप का समदर्शिता का) प्रण टला जाता है।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मैया – माता, कबहि बढैगी – कब बढेगी, किती – कितनी, मौहिं – मुझे, पिंवत भई – समय पीते हो गया, अजहूँ – आज भी, बल की – बलराम की, बेनी – वेणी, ह्वै है – हो जएगी, न्हवावत – स्नान करते समय, भँइ– भूमि, काचो – कच्चा, पचि–पचि – बार–बार, माखन – मक्खन , दोउ – दोनों, हलधर – बलराम, जोटी – जोड़ी।

कृष्ण यशोदा से शिकायत करते हैं माँ (मेरी) चोटी कब बड़ी होगी? मुझे कितना समय दूध पीते हो गया और यह आज भी छोटी ही है। तुम तो कहती हो कि यह बलराम की वेणी की भाँति लम्बी और मोटी होगी। काढ़ते, गुहते तथा स्नान करते समय नागिन की तरह पृथ्वी पर लोटने लगेगी। तुम बार–बार मुझे कच्चा दूध पिलाती हो तथा मक्खन और रोटी नहीं देती हो। सूरदास कहते हैं कि कृष्ण और बलराम दोनों भाइयों की जोडी चिरंजीवी हो।

लइहौं – लूँगा, धरनि पै – धरती पर, अबही – अभी, न अइहौं – नहीं आऊँगा, सुरभी – गाय, पय – दूध, न करि हौं – न करूँगा, बलदाउहिं – बलदेव को, न जनइहौं – नहीं, कहति जसोमति – यशोदा कहती है, नई दुलहिया – नई दुल्हन, दइहौं – दे दूँगी, तेरी सौं – तेरी सौगन्ध है, अबहिं – अभी, बियाहन जइ हौं – विवाह करने जाऊँगा। कुटिल – नटखट, सुमंगल – विवाह में 'सुमंगलीरियं वधू' कहकर आशीर्वाद दिया जाता है।

बालक कृष्ण यशोदा से चन्द रूपी खिलौना माँगता है। वह कहता है, मैं चन्द खिलौना लूँगा। हे माता चन्द खिलौना अभी नहीं देती तो मैं ज़मीन पर लेटकर लोट जाऊँगा, मैं तेरी गोद में नहीं आ बैठूँगा। यही नहीं मैं गाय का दूध नहीं पीऊँगा अपने बाल गूँथने नहीं दूँगा। मैं तो नंद बाबा का पुत्र हूँ, तेरा पुत्र नहीं हूँ। कृष्ण की ऐसी बातें सुनकर माता यशोदा ने कहा, हे कृष्ण ! तू आगे आ, मेरी बात सुन, मैं ने बलदेव को जन्म नहीं दिया। यशोदा हँसती हूई कृष्ण को समझाती है कि मैं तुझे नई दुल्हन दे दूँगी। यह सुनते ही कृष्ण कहने लगा कि तेरी सौगन्ध है, हे माताा मैं अभी जाकर विवाह कर लूँगा। सूरदास कहते हैं कि यह बालकृष्ण बडा नटखट है; नटखट बालकृष्ण की शादी में बाराती बनकर स्वयं सूरदास सुमंगल गीत गाना चाहते हैं।

• • • • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

3. तुलसीदास

भक्तिकाल के सर्वश्रेष्ठ कवि तुलसीदास के जीवन - वृत्त का हमें बहुत कम ज्ञान है। बताया जाता है कि तुलसी का जन्म सन् 1532 ई. में बाँदा जिले के राजापुर ग्राम में हुआ। उनके पिता का नाम आत्माराम और माता का नाम हुलसी था। बचपन में ही वे अनाथ हो गए। पत्नी के प्रति वे बड़े आसक्त रहे और अंत में उसकी डाँट-फटकार से वीतरागी हो गए। कहा जाता है कि वे काशी में पहुँचकर साधु-संतों के साथ रहने लगे। बाबा नरहरिदास ने उन्हें राम कथा सुनाई जिससे बाद में वे राम के अनन्य भक्त हो गए।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र को तुलसी ने अपना इष्टदेव माना। उनके प्रति अपनी असीम भक्ति प्रकट करते हुए तुलसी ने 'रामचरितमानस' की रचना की। जीवन की शायद ही कोई ऐसी स्थिति हो जिसका वर्णन मानस में न हुआ हो। आनन्द और शोक, क्रोध और क्षमा, त्याग और स्वार्थ, लौकिकता और परमार्थ के विलक्षण चित्रण इस ग्रन्थ में बड़े कौशल के साथ गूँथ दिए गए हैं। परिणामतः उनका 'रामचरितमानस' जनता में धर्मग्रन्थ के रूप में मान्य हो चुका है। जीवन के विभिन्न आदर्शों केलिए जनता 'मानस' की उक्तियों को आधार बनाती है। 'मानस' में तुलसी ने श्रीराम का जो शक्ति-शील-सौन्दर्य युक्त आदर्श रूप प्रस्तुत किया, वह जन-मानस में चिरप्रतिष्ठित हो गया।

तुलसी काव्य की एक बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने अपने काव्य द्वारा समाज को समुन्नत बनाने का प्रयत्न किया। फलतः उनका साहित्य समाज का पथप्रदर्शक बना। वे मध्ययुग के सबसे बड़े लोकनायक बन गए।

तुलसी की पहुँच घर-घर में है, या वे व्यापक समाज में सर्वाधिक लोक-प्रिय कवि हैं तो इसका मुख्य कारण यह है कि वे गृहस्थ-जीवन और

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आत्म-निवेदन की सच्ची अनुभूति अभिव्यक्त कर सके। तुलसी ने अनेक काव्य कृतियों की रचना की जिनमें 'रामचरितमानस', 'विनय पत्रिका', 'कवितावली', 'गीतावली', 'दोहावली' आदि प्रसिद्ध हैं। कवि का भाषा पर असाधारण अधिकार है। उन्होंने अवधी और ब्रज दोनों ही भाषाओं में काव्य-रचना की।

यहाँ संकलित दोहों में राम नाम की महिमा, संतोष रूपी धन का मूल्य, मुखिया की चरित्रगत विशिष्टता, मधुर भाषण का प्रयोजन, संतों का स्वभाव आदि बहुत सी बातें मिलती हैं।

तुलसी के दोहे

1. राम नाम मनि दीप धरु जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जौ चाहसि उजियारं॥

2. गोधन गज-धन बाजि-धन, और रतन-धन खान।
जब आवत संतोष-धन, सब धन धूरि समान॥

3. मुखिया मुख सौं चाहिए, खान पान को एक।
पालै पोसै सकल जग, तुलसी सहित विवेक॥

4. तुलसी मीठे बचन ते, सुख उपजत चहूँ ओर।
बसीकरन एक मंत्र है, परिहरु बचन कठोर॥

5. बिना तेज के पुरुष की, अवशि अवज्ञा होय।
आगि बुझे ज्यों राख की, आप छुवै सब कोय॥

6. तुलसी साथी विपत्ति के, विद्या, विनय, विवेक।
साहस, सुकृत, सुसत्य-व्रत, राम भरोसे एक॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

7. काम क्रोध मद लोभ क़ी जौ लौं मन में खान।
तौ लौं पण्डित मूरखों, तुलसी एक समान॥

8. जड़ चेतन गुन दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
सन्त हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारि विकार॥

9. तुलसी संत सुअंब तरु, फूलि फलहिं पर हेत।
इतते ये पाहन हनत, उतते वे फल देत॥

10. आवत ही हरषै नहीं; नैनन नहीं सनेह।
तुलसी तहाँ न जाइए, कंचन बरसे मेह॥

शब्दार्थ और भावार्थ

1. मनि दीप – मणि दीप (रत्न दीप), जीह – जिह्वा, जीभ, देहरी – देहली, बाहिरौ – बाहर, जौ चाहसि – जो चाहता है, उजियार – उजियाला, प्रकाश।

प्रस्तुत दोहे में तुलसीदास राम नाम की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि राम नाम वह मणिदीप है जिसको मुँह की देहली पर जलाकर रखने से बाहर–भीतर प्रकाश फैलता है। अर्थात् जो अपने को और दुनिया को ईश्वर–ज्ञान देना चाहता है वह नित्य श्रीराम का नाम ले, उनका जप करे।

2. गोधन – गायरूपी धन, गज–धन – हाथीरूपी धन, बाजि–धन – घोड़े रूपी धन, रतन–धन – रत्नरूपी धन।

कविवर तुलसीदास हमें समझाते हैं कि संतोषरूपी धन ही सर्वोत्तम है। गायें, हाथी, घोड़े, रत्न सब धन तो मात्र धन हैं। परंतु

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जब संतोषरूपी धन मिलता है तब ये सारे धन धूलि समान तुच्छ प्रतीत होते हैं।

3. मुखिया – प्रधान, मुख – मुँह, सौ – के समान, पालै–पोसै – पालन–पोषण करता है, सकल जग – समस्त जगत् का।

तुलसीदास कहते हैं कि मुखिया खान–पान में मुँह जैसा होना चाहिए जो कि सारे अंगों का बुद्धिमत्ता से पालन करे।

4. मीठे वचन ते – मीठे वचन से, उपजत – उत्पन्न होता है, चहूँ ओर – चारों ओर, बसीकरन – वशीकरण, परिहरु – छोड़कर।

प्रस्तुत दोहे में तुलसी मधुर वचन की महिमा बताते हुए कहते हैं कि मीठे वचन से चारों ओर सुख व्याप्त होता है। कटु वचन छोड़कर मधुर वचन बोलना लोगों को अपने वश में करने का एक मंत्र है।

5. अवशि – अवश्य, अवज्ञा होय – अवज्ञा होती है, आगि बुझे – आग बुझने पर, छुवै – छू लेते हैं।

तुलसीदास कहते हैं कि तेजहीन पुरुष का अवश्य ही अपमान होता है। जैसे आग के बुझ जाने पर राख को हर कोई छू लेता है वैसे तेजहीन पुरुष का सब लोगों द्वारा अपमान होता है।

6. भरोसे – विश्वास।

तुलसीदास बताते हैं कि विपत्ति में विद्या, नम्रता, विवेक, साहस, अच्छे काम, सच्चाई व राम का भरोसा ही साथी होता है।

7. जौ लौं – जब तक, तौ लौं – तब तक

प्रस्तुत दोहे में तुलसीदास कहते हैं कि मन में जब तक काम, क्रोध, मद और लोभ का वास है तब तक पण्डित और मूर्ख दोनों एक जैसे हैं।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

8. विश्व कीन्ह – विश्व को किया, बनाया, करतार – कर्तार, ईश्वर, गुन गहहिं – गुणों को ग्रहण करते हैं, पय – दूध, परि हरि – छोड़ता है, बारि विकार – विषय वासना रूपी पानी।।

प्रस्तुत दोहे में तुलसी कहते हैं कि भगवान ने संसार में जड़–चेतन और गुण–दोष सभी कुछ बनाया है। किन्तु सन्त जन केवल गुणों को ग्रहण करते हैं और दोषों को छोड़ देते हैं। जैसे पानी मिले दूध से हंस केवल दूध को ग्रहण करता है और पानी को रहने देता है।

9. सुअंब तरु – सुन्दर आम का पेड़, पर हेत – दुसरों की भलाई केलिए, इतते – यहाँ से, इधर से, पाहन – पत्थर, हनत – मारता है,चोट करता है, उतते – वहाँ से, उधर से।

प्रस्तुत दोहे में तुलसीदास संत के चरित्र का वर्णन करते हुए कहते हैं कि संत अच्छे आम्रवृक्ष के समान हैं। जैसे आम्रवृक्ष दूसरों केलिए फलते–फूलते हैं वेसे संत दूसरों केलिए अपना जीवन बिताते हैं। वे अपकार करनेवाले का भी उपकार करते हैं। जैसे आम्रवृक्ष पत्थर मारनेवाले को अपना मीठा फल गिरा देते है वैसे संत उपद्रव करनेवालों को भी सहायता पहुँचाते हैं।

10. हरषे नहीं – आनन्दित नहीं होता, कंचन – सोना, मेह – मेघ।

जो (अतिथि) के आने पर प्रसन्न नहीं होता और जिसकी आँखों में स्नेह की झलक नहीं दिखाई देती, तुलसीदास कहते हैं कि वहाँ कभी नहीं जाना चाहिए चाहे सोने की वर्षा ही क्यों न हो।

• • • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

4. रहीम

अब्दुर्रहीम मुगल सम्राट अकबर के अभिभावक बैरम खाँ खानखाना के पुत्र थे। आगे चलकर ये अकबर के मंत्री और प्रधान सेनापति बने। वीरता के समान रहीम अपने काव्यानुराग तथा दानशीलता केलिए प्रसिद्ध थे। हिन्दी के कई कवियों के वे आश्रयदाता थे। रहीम को अरबी, फारसी, तुर्की, संस्कृत आदि अनेक भाषाओं का ज्ञान था। हिन्दी के तो वे कवि ही थे।

रहीम का व्यक्तित्व बड़ा ही विलक्षण रहा है। कवि और सेनापति का अनमेल कार्य करते हुए रहीम ने असाधारण जीवन बिताया। सम्राट अकबर के दरबारी कवि के रूप में उनकी गणना की जाती है। कवि की तीक्ष्ण बुद्धि–शक्ति का परिचय उनके काव्यों से मिलता है।

सम्राट अकबर की तरह वे धर्म सहिष्णु थे। हिन्दू धर्म के प्रति वे आदर ही नहीं प्रकट करते थे बल्कि आस्था भी रखते थे। राम, कृष्ण आदि के प्रति जो भक्ति उनके मन में थी वही कई दोहों में फूट निकली। कवि की विद्वत्ता, बहुज्ञता, नीतिप्रियता, मूल्यों के प्रति मोह आदि जानना हो तो उनके दोहे पढ़ें। उनकी कई बातें ऐसी हैं जो सूक्तियाँ बनी हैं।

रहीम के तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं – 'रहीम दोहावली', 'बरवै नायिका भेद' और 'नगर शोभा'। रहीम की रचनाओं के मुख्य विषय नीति, भक्ति और शृंगार हैं। वे हिन्दी के लोकप्रिय कवि हैं। उत्तर भारत के गाँवों में उनके दोहों का प्रचार घर–घर में है। साहित्य–रसिकों की बात तो दूर, अपढ किसान भी इनके दोहों का स्मरण करते हैं।

रहीम के दोहों में भक्ति के अतिरिक्त सदाचार के अनेक तत्व मिलते हैं। छोटों के प्रति आदर, परोपकार की महिमा, रूठे सुजनों को मनाने का

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उपदेश, विपत्ति में साथ देने की आवश्यकता, गरीबों के प्रति सहानुभूति, उत्तम प्रकृतिवाले मनुष्य का महत्व आदि न जाने कितने विषयों पर उनका ध्यान गया है। उपदेश के वचन होने पर भी उन्होंने ऐसे कहे हैं कि वे हमें मीठे और मधुर लगते हैं। इसी में कवि कौशल है।

रहीम के दोहे

1. रहिमन देखि बडेन को, लघु न दीजिए डारि।
   जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तरवारि॥

2. तरुवर फल नहिं खात है, सरवर पियहिं न पान।
   कहि रहीम परकाज हित, सम्पति संचहिं सुजान॥

3. रूठे सुजन मनाइए, जो रूठें सौ बार।
   रहिमन फिर फिर पोइए, टूटे मुक्ताहार॥

4. धनि रहीम जल पंक को, लघु जिय पियत अघाइ।
   उदधि बडाई कौन है, जगत पियासो जाइ॥

5. रहिमन विद्या बुधि नहीं, नहीं धरम अरु दान।
   जन्म वृथा भू पर धरेउ, पशु बिन पूँछ विषान॥

6. जो विषय संतन तजो, मूढ़ ताहि लपटात।
   ज्यों नर डारत वमनकर, स्वान स्वाद सों खात॥

7. सर सूखे पंछी उडै, औरै सरन्ह समाहिं।
   दीन मीन. बिन पच्छ के, कहु रहीम, कहँ जाहिं॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

8. रहिमन धागा प्रेम का मत तोरउ चटकाइ।
टूटे से फिरि फिरि ना मिलै, मिले गाँठि परि जाइ॥

9. दीन सबन को लखत है, दीनहि लखै न कोय।
जो रहीम दीनहि लखैं, दीनबन्धु, सम होय॥

10. जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग॥

शब्दार्थ और भावार्थ

1. रहिमन – रहीम कहते हैं, देखि बडेन को – बडों को देखकर, न दीजिए डारि – न डाल दीजिए, आवै – आती है, कहा करै – क्या करेंगे, तरवारि – तलवार लेकर।

प्रस्तुत दोहे में कविवर रहीम हमें यह उपदेश देते हैं कि बड़ों को देखकर छोटों की उपेक्षा मत करें। क्योंकि जहाँ सुई काम आती है वहाँ तलवार लेकर हम क्या करेंगे? तात्पर्य है जैसे सुई का उपयोग है वैसे छोटे लोगों का महत्व भी कम नहीं है।

2. तरुवर – वृक्ष, सरवर – सरोवर, पियहिं न – नहीं पीता, परकाज – दूसरों का काम, परहित, संचहिं – इकट्ठा करते हैं, सुजान – ज्ञानी, सज्जन।

इस दोहे में रहीम ने बताया है कि जिस प्रकार वृक्ष अपना फल स्वयं नहीं खाता और सरोवर अपना जल स्वंयं नही पीता उसी प्रकार विवेकी और ज्ञानी दूसरों का काम आने केलिए सम्पत्ति संचित करते हैं।

3. फिर फिर पोइए – बार बार पिरोइए

प्रस्तुत दोहे में रहीम ने स्पष्ट किया है कि रूठे सज्जनों को मनाना चाहिए। सज्जन अगर सौ बार रूठ जाएं तो भी उन्हें मनाना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रहीम बताते हैं कि रत्न हार को बार बार टूट जाने पर हम बार बार पिरोकर माला बनाते हैं। वैसे ही सज्जनों के वैमनस्य को दूर करना हमारा कर्तव्य है।

4. धनि – धन्य, पंक – कीचड, लघु जिय – लघु जीव, अघाइ– तृप्त होते हैं, उदधि – समुद्र

प्रस्तुत दोहे में रहीम बताते हैं कि समुद्र के खारे पानी की अपेक्षा छोटे तालाब का कीचड भरा पानी अधिक महत्वपूर्ण है। वे कहते हैं कि पंक का जल धन्य है क्योंकि लघु जीव उस जल को पीकर संतुष्ट हो जाते हैं। इस तालाब के पानी की तुलना में समुद्र का पानी कितना विशाल है। परंतु उसका पानी खारा होने के कारण लोग वह पानी नहीं पी सकते। वे प्यासे ही रह जाते हैं।

5. अरु – और, भू – भूमि, विषान – सींग।

प्रस्तुत दोहे में रहीम बताते हैं कि जिस व्यक्ति में विद्या, बुद्धि, धर्म और दान नहीं है उसका इस धरती पर जन्म लेना व्यर्थ ही है। वह बिना पूँछ और सींग का पशु है।

6. संतन तजो – संतों ने छोड़ दिया, ताहि – उससे, लपटात – लिपटा रहता है, डारत – डालता है, वमन कर – उगल कर, कै कर, स्वान – श्वान, कुत्ता, सों – से।

सही मतलब समझे बिना बड़ों की बातों का अनुसरण करना बड़ी मूर्खता है। रहीम कहते हैं कि जिन विषयों को संतों ने छोड़ दिया उन्हीं पर मूर्ख लोग लिपटे रहते हैं। मूर्ख का विचार है कि संतों द्वारा उपेक्षित बातों का पालन करने से बडा प्रयोजन होगा। मनुष्य के वमन के पदार्थ कुत्ते बडे चाव से खाते हैं। संतों द्वारा उपेक्षित बातों को लेनेवाले वमन खानेवाले कुत्ते के जैसे हैं।

7. सर – सरोवर, पंछी – पक्षी, औरे सरन्हैं – दूसरी शरण, पच्छ – पंख, कहँ जाहि – कहाँ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विपत्ति ही मित्रता की कसौटी है। सरोवर के पास रहनेवाला पक्षी सरोवर सूख जाने पर पानीदार सरोवर की शरण लेता है। परंतु मछली सरोवर का सम्बन्ध नहीं छोड़ती। मीन की बडी दीन दशा है। बिना पंख के वह कहाँ चली जा सकती।

8. मत तोरउ चटकाइ - खींचकर मत तोडो, फिरि फिर - बार बार, गाँठि परि जाइ - गाँठ पड़ जाती है।

स्नेह सम्बन्ध का निर्वाह करने में सब को सतर्क रहना चाहिए। रहीम बताते है कि प्रेम के धागे को बरबस खींचकर मत तोड़ो। प्रेम का धागा टूट जाने पर फिर मिलता नहीं। फिर मिला भी तो उसमें गाँठ पड़ जाएगी।

9. सबन को - सबों को, लखत है - देखता है, दीनहि - दीन को, लखै न कोय - कोई नही देखता, दीनबंधु - ईश्वर।

प्रस्तुत दोहे में रहीम कहते हैं कि दीन दुखियों को देखनेवाला कोई नहीं है। वे बताते हैं कि दीन सब को देखता है लेकिन उसको कोई नहीं देखता। जो दीन दुखियों को देखेगा, उनका संरक्षण करेगा वह दीनबन्धु भगवान के समान श्रेष्ठ है।

10. प्रकृति - स्वभाव, का - क्या, करि सकत - कर सकता है, कुसंग - बुरे लोगों का सम्पर्क, व्यापत - फैलता है, लपटे रहत - लिपट कर रहता है, भुजंग - साँप।

रहीम पूछते हैं कि उत्तम स्वभाववाले व्यक्ति को बुरों के सम्पर्क से क्या हानि होती है? उत्तम व्यक्ति को कुसंगति से कोई हानि नहीं होती। साँप और चन्दन वृक्ष का उदाहरण देकर वे अपना मत व्यक्त करते हैं। चन्दन वृक्ष पर विषैला साँप लिपटे रहने पर भी उसका विष चंदन वृक्ष में फैलता नहीं।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

5. व्रज देश में सन्ध्या

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

खड़ीबोली हिन्दी के प्रथम महाकाव्यकार 'हरिऔध' जी का सृजन काल भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग और छायावादी युग – इन तीनों युगों में फैला हुआ है। उन्होंने व्रज भाषा एवं खड़ीबोली दोनों में काव्यरचना की है। उन्होंने संस्कृत छन्दों का हिन्दी में प्रयोग किया। वे द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। 'प्रियप्रवास' और 'वैदेही वनवास' नामक दो महाकाव्यों के अलावा 'चोखे चौपदे' और 'चुभते चौपदे' उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। उनकी रचनाओं में 'रसकलश' को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

'प्रियप्रवास' खड़ीबोली में रचा गया प्रथम महाकाव्य है। इसमें कृष्ण के वृन्दावन छोड़कर मथुरा जाने और उद्धव के आने तक की कथा को प्रस्तुत किया है। उन्होंने कृष्ण को एक कर्मयोगी के रूप में और राधा को प्रेम, त्याग और सेवाभाव की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित किया है। 'व्रज देश में सन्ध्या' प्रिय-प्रवास से उद्धृत है। इसमें व्रज देश की सन्ध्या का सफल-सुन्दर – सजीव चित्रण किया गया है।

दिवस का अवसान समीप था
गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरुशिखा-पर थी अब राजती
कमलिनी – कुल – वल्लभ की प्रभा॥ १ ॥

विपिन बीच विहंगम वृन्द का
कलनिनाद विवर्द्धित रहा।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ध्वनिमयी विविधा विहगावली
उड रही नभ - मंडल मध्य थी॥ २ ॥

अधिक और हुई नभ - लालिमा,
दस दिशा अनुरंजित हो गयी।
सकल पादप - पुंज हरीतिमा
अरुणिमा विनिमज्जित- सी हूई॥ ३ ॥

झलकने पुलिनों पर भी लगी
गगन के तल की यह लालिमा।
सरित और सर के जल में पडी
अरुणता अति ही रमणीय थी॥ ४ ॥

अचल के शिखरों पर जा चढी
किरण पादप - शीश - विहारिणी
तरणि - बिंब तिरोहित हो चला,
गगन - मंडल मध्य शनैः शनैः॥ ५ ॥

ध्वनिमयी करके गिरि -कंदरा
कलित कानन केलि - निकुंज को,
मुरलि एक बजी इस काल ही
तरणिजा - तट - राजित कुंज में॥ ६ ॥

कठिन शब्दार्थ

लोहित - लाल, कमलिनी - छोटा कमल, कमलिनी-कुल-वल्लभ - सूर्य, विहंगम - पक्षी, विवर्द्धित - बढ़ा हुआ, विनिमज्जित - डूबा हुआ, मग्न, अचल - पहाड़, पादप - वृक्ष, तरणि - सूर्य, तरणिजा - यमुना नदी, कंदरा - गुफा, कलित - सुन्दर।

●●●●●●●●●●

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

६. मनुष्यता

मैथिलीशरण गुप्त

भारत के अतीत के आधार पर नव राष्ट्र निर्माण की आकाँक्षा करनेवाले श्री मैथिलीशरण गुप्तजी हिन्दी के राष्ट्र-कवि के नाम से प्रसिद्ध हैं। आपकी कविताओं में देश-भक्ति की भावना कूट-कूटकर भरी रहती है। आप देश के नवोत्थान एवं नव जागरण के अग्रदूत माने जाते हैं। आपने अपने विपुल काव्य-सृजन द्वारा न केवल देश में राष्ट्रीय, सांस्कृतिक एवं सामाजिक जागरण लाने का प्रयत्न किया, बल्कि हिन्दी काव्य को उदात्त भाव एवं उन्नत भाषा-शैली प्रदानकर, उसमें नवोन्मेष भरने का भी भरसक प्रयास किया। खडीबोली को काव्योचित बनाकर आपने हिन्दी की जो महान सेवा की, उसकेलिए हिन्दी काव्य-जगत् आपके प्रति हमेशा आभारी रहेगा। आपके काव्यों में भक्ति एवं प्रेम के साथ मूलतः देश-भक्ति एवं मानव-प्रेम की भावना मुखरित पाई जाती है। आपका राष्ट्र प्रेम संकीर्ण न होकर, समस्त मानवता के कल्याण की कामना से ओतप्रोत है।

मैथिलीशरण गुप्तजी का जन्म सन् 1885 ई. में झांसी जिले के चिरगाव नामक गाँव में हुआ था। धर्मनिष्ठ परिवार में जन्म लेने के कारण आपमें बचपन से ही भक्ति एवं मानव-प्रेम के संस्कार आ गये। आपके पिता स्वयं एक भक्त कवि थे अतः आपमें जन्मजात काव्य-प्रतिभा थी। बचपन में पिता के प्रोत्साहन से, बाद में महावीर प्रसाद द्विवेदी और मुँशी अजमेरी जी के प्रोत्साहन से आप काव्य-रचना के क्षेत्र में निरंतर आगे बढते रहे। आप स्वभाव से सौम्य एवं सरल पुरुष थे।

आपने प्रबंध और मुक्तक काव्य लिखे। आपने ऊर्मिला, कैकेयी, यशोधरा, विष्णुप्रिया आदि भारतीय इतिहास की उपेक्षित नारियों पर काव्य कर,

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उन्हें गौरवपूर्ण स्थान दिलाने का सफल प्रयास किया। आपकी भाषा बोलचाल की प्रसाद–गुण सम्पन्न खडीबोली है। फिर भी आपने सरल संस्कृत शब्दों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। 'जयद्रथ वध', 'भारत– भारती', 'साकेत', 'यशोधरा', 'द्वापर' आदि आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

मानवता के पुजारी श्री मैथिलीशरण गुप्तजी की एक सुन्दर कविता है "मनुष्यता"। इसमें मानवता की महत्ता दर्शाकर, उसकी आवश्यकता पर बल दिया गया है। वास्तव में मानव, सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ विभूति माना जाता है। सृष्टिकर्ता ने उसे अनेक विशिष्ट विभूतियों से विभूषित किया है। उसकी एक विशेषता यह है कि वह मर्त्य होकर भी अमर्त्य है। उसकी अपनी मनुष्यता ही उसे अमरता प्रदान करती है। मनुष्यता से मंडित मानव का स्थान देव–तुल्य हो जाता है। यहाँ तक कि देव–गण भी इसकी प्रशंसा करते हैं, इसका गुण–गान गाते हैं। किन्तु जब वह स्वार्थ, मद एवं मोह का शिकार बन जाता है, तो उसके आंतरिक सद्‌गुण क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। उसमें इन्सानियत विलुप्त हो जाती है और वह अपने देव–तुल्य स्थान से गिरकर पशु–तुल्य बन जाता है। श्री मैथिलीशरण गुप्तजी ने प्रस्तुत कविता में मनुष्य के गरिमामय एवं गौरवोन्नत स्थान का आभास दिलाया है।

(१)

विचार लो कि मर्त्य हो न मृत्यु से डरो कभी
मरो, परन्तु यों मरो कि याद जो करें सभी।
हुई न यों सु–मृत्यु तो वृथा मरे, वृथा जिये,
मरा नहीं वही कि जो जिया न आप के लिए।
यही पशु–प्रवृत्ति है कि आप ही चरे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥

(२)

उसी उदार की कथा सरस्वती बखानती,
उसी उदार से धरा कृतार्थ भाव मानती।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसी उदार की सदा सजीव कीर्ति कूजती,
तथा उसी उदार को समस्त सृष्टि पूजती।
अखंड आत्मभाव जो असीम विश्व में भरे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥

(३)

क्षुधार्त रंतिदेव ने दिया करस्थ थाल भी,
तथा दधीचि ने दिया परार्थ अस्थिजाल भी।
उशीनर क्षितीश ने स्वमांस दान भी किया,
सहर्ष वीर कर्ण ने शरीर-चर्म भी दिया।
अनित्य देह के लिए अनादि जीव क्या डरे?
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥

(४)

सहानुभूति चाहिए, महाविभूति है, यही;
वशीकृता सदैव है बनी हुई स्वयं मही।
विरुद्धवाद बुद्ध का दया-प्रवाह में बहा,
विनीत लोकवर्ग क्या न सामने झुका रहा?
अहा ! वही उदार है परोपकार जो करे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥

(५)

रहो न भूल के कभी मदांध तुच्छ वित्त में,
सनाथ जान आपको करो न गर्व चित्त में।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनाथ कौन है यहाँ? त्रिलोकनाथ साथ हैं,
दयालु दीनबन्धु के बड़े विशाल हाथ हैं।
अतीत भाग्यहीन है अधीर भाव जो करे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए **मरे**॥

(६)

अनन्त अंतरिक्ष में अनन्त देव हैं खड़े,
समक्ष ही स्वबाहु जो बढा रहे बड़े-बड़े।
परस्परावलंब से उठो तथा बढ़ो सभी,
अभी अमर्त्य-अंक में अपंक हो चढ़ो **सभी**।
रहो न यों कि एक से न काम और का सरे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए **मरे**॥

(७)

"मनुष्य मात्र बंधु हैं" यही बड़ा विवेक है,
पुराणपुरुष स्वयंभू पिता प्रसिद्ध एक है।
फलानुसार कर्म्म के अवश्य बाह्य भेद हैं,
परन्तु अन्तरैक्य में प्रमाणभूत वेद हैं।
अनर्थ है कि बन्धु ही न बन्धु की व्यथा हरे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥

(८)

चलो अभीष्ट मार्ग में सहर्ष खेलते हुए,
विपत्ति, विघ्न जो पड़े उन्हें धकेलते हुए।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

घटे न हेलमेल हाँ, बढे न भिन्नता कभी;
अतर्क एक पन्थ के सतर्क पन्थि हों सभी।
तभी समर्थ भाव है कि तारतम हुआ तरे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥

कठिन शब्दार्थ

मर्त्य हो – मरनेवाले हो, वृथा – बेकार, निष्प्रयोजन, आप के लिए – अपने लिए, निज स्वार्थ के लिए, पशु–प्रवृत्ति है – जानवरों की आदत है, बखानती – प्रशंसा करती, क्षुधार्त – भूख से व्याकुल, करस्थ – हाथ में पकड़ा हुआ, अस्थि–जाल – हड्डियों का समूह, क्षितीश – राजा, अनित्य – नश्वर, मदांध – मस्ती में अंधे, वित्त – धन, अतीव – अत्यधिक, समक्ष – सामने, अमर्त्य–अंक – देवता की गोद, अपंक – कलंक रहित, स्वयंभू – परमात्मा, अन्तरैक्य – आत्मा की समानता, प्रमाणभूव – मानने योग्य, अभीष्ट – मन–चाहे, वांछित, हेलमेल – परस्पर स्नेह, अतर्क – सूक्ष्म, पंथ – मार्ग, पन्थि – यात्री,

• • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

7. चित्रकूट में श्री राम

जयशंकर प्रसाद

छायावादी काव्य के कीर्ति–स्तम्भ श्री जयशंकर प्रसादजी का जन्म काशी में हुआ था। आपके पिता देवी प्रसाद थे। आपके पितामह शिवरत्न साहू बड़े दानी और दयालू थे। प्रसादजी की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई थी। आपकी बारह वर्ष की अवस्था में माताजी का देहांत हो गया। जब प्रसादजी सत्रह वर्ष के थे, तब से आपको 'गृहस्थी' का बोझ ढोना पड़ा। बड़े भाई के देहांत के बाद घर का समस्त भार आपको ही संभालना पड़ा। इन सभी उलझनों के बावजूद आपने अपना अध्ययन नहीं छोड़ा। घर पर ही आप अंग्रेज़ी, हिन्दी, उर्दू, संस्कृत एवं फारसी पढ़ने लगे। आपकों कविता रचना का बचपन से ही शौक था।

जयशंकर प्रसादजी हिन्दी के बहुमुखी प्रतिभाशाली कलाकार हैं। आपने कविता, नाटक, निबन्ध, उपन्यास, आलोचना आदि की विपुल रचनाकर, हिन्दी काव्य को समुन्नत एवं समृद्ध किया। आपके विराट व्यक्तित्व की छाप आपके विशाल कृतित्व में पायी जाती है। आपको प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा एवं भक्ति थी। यद्यपि आप हिन्दुत्व के पुजारी थे तथापि आपके काव्य में विराट मानवतावादी भावना सर्वत्र लक्षित होती है। प्रेम एवं सौन्दर्य के आप अद्वितीय चित्रकार हैं। 'कामायनी' आपकी सर्वश्रेष्ठ काव्य–कृति है। केवल भारतीय साहित्य में ही नहीं बल्कि विश्व साहित्य में भी इसकी गिनती होती है। इसमें मानव प्रेम एवं सौन्दर्य का उदात्त एवं गरिमामय रूप प्रस्तुत किया गया है। लाक्षणिक एवं व्यंजनात्मक शब्दों की भरमार आपके काव्य की विशेषता है। आपकी भाषा संस्कृत–गर्भित होती है। 'झरना', 'लहर', 'आँसू' आदि आपके काव्य–ग्रंथ हैं। अजातशत्रू, स्कन्दगुप्त, चन्द्रगुप्त आदि आपके प्रसिद्ध नाटक हैं।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वनवास गमन में कुछ काल के लिए श्री राम चित्रकूट में रहे थे। राम, लक्ष्मण एवं सीता चित्रकूट के जंगल में भी मंगल मना रहे थे। चित्रकूट के रम्य प्राकृतिक वातावरण के बीच झोंपडी में रहकर भी वे अत्यंत प्रसन्न थे। प्रस्तुत कविता में राम एवं सीता के विनोद संलाप के द्वारा भारतीय संस्कृति के गरिमामय रूप और भारतीय आदर्श नारी के गौरवान्वित स्थान का परिचय दिया गया है। श्री राम एवं सीता के प्रश्नोत्तर अत्यंत अर्थपूर्ण, सार-गर्भित एवं रोचक हैं।

उदित कुमुदिनी-नाथ हुए प्राची में ऐसे,
सुधा-कलस रत्नाकर से उठता हो जैसे !
धीरे धीरे उठे नई आशा-से मन में,
क्रीड़ा करने लगे स्वच्छ स्वच्छन्द गगन में॥

चित्रकूट भी चित्रलिखा-सा देख रहा था,
मन्दाकिनी-तरंग उसीसे खेल रहा था।
स्फटिक शिला आसीन राम वैदेही ऐसे,
निर्मल सर में नील-कमल नलिनी हो जैसे॥

निज प्रियतम के संग सुखी थी कानन में भी,
प्रेम भरा था वैदेही के आनन में भी।
मृगशावक के साथ मृगी भी देख रही थी;
सरल विलोकन जनक-सुता से सीख रही थी॥

निर्वासित थे राम, राज्य था कानन में भी,
सच ही है श्रीमान भोगते सुख वन में भी।
चन्द्रातप था व्योम, तारका-रत्न जड़े थे,
स्वच्छ दीप था सोम, प्रजा तरुपुंज खड़े थे॥
शान्त नदी का स्रोत बिछा था अति सुखकारी,
कमल-कली का नृत्य हो रहा था मनहारी
बोल उठा जो हंस देखकर कमल-कली को,
तुरंत रोकना पड़ा गूंजकर चतुर-अली को॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हिली आम की डाल, चला ज्यों नवल हिंडोला,
'आह कौन है' पंचम स्वर से कोकिल बोला।
मलयानिल प्रहरी-सा फिरता था उस वन में,
शान्ति शान्त हो बैठी थी कामद-कानन में॥

राघव बोले देख जानकी के आनन को-
'स्वर्गंगा का कमल मिला कैसे कानन को?'
'नील मधुप को देख, वहीं उस कंज-कली ने
स्वयं आगमन किया'-कहा यह जनक-लली ने॥

बोले राघव-'प्रिये ! भयावह-से इस वन में,
शंका होती नहीं तुम्हारे कोमल मन में?'
कहा जानकी ने हँसकर-'उसको है क्या डर,
जिसके पास प्रवीण धनुर्धर ऐसा सहचर?'

कहा राम ने-'अहा ! महल मन्दिर मनभाव
स्मरण न होते तुम्हें कहो क्या वे अति पावन?
रहते थे झंकारपूर्ण जो तव नूपुर से,
सुरभिपूर्ण पुर होता था जिस अन्तःपुर से'॥

जनकसुता ने कहा-'नाथ! यह क्या कहते हैं?
नारी के सुख सभी साथ पति के रहते हैं।
कहो उसे प्रिय प्राण! अभाव रहा फिर किसका,
विभव चरण का रेणु तुम्हारा ही है जिसका॥'

कठिन शब्दार्थ

कानन - जंगल, चन्द्रातप - चाँदनी, व्योम - आकाश, स्वच्छ - निर्मल, स्रोत - प्रवाह, चतुर - कुशल, अली - भ्रमर, नवल - नया, हिंडोला - झूला, प्रहरी - पहरेदार, आनन - मुख, मधुप - भ्रमर, कंज - कमल, लली - लाडली बेटी, प्रवीण - निपुण, भयावह - भयानक, रेणु - रज, धूलि

• • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. प्रियतम

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

हिन्दी काव्य में पौरुष का अदम्य उत्साह भरनेवाले कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निरालाजी, क्रांति एवं जागरण के अग्रदूत माने जाते हैं। निरालाजी ने निराले प्रयोग से, हिन्दी काव्य को एक नई गति, नया संगीत एवं नई गरिमा प्रदान की। आपके विराट व्यक्तित्व की अमिट छाप हम उनके कृतित्व में स्पष्ट देख सकते हैं। आप स्वभाव से स्वतंत्र-प्रिय थे, अतः आपने हिन्दी काव्य को स्वच्छन्दता की ओर उन्मुख किया। आप एक प्रकार से विद्रोही कवि थे। आपने हिन्दी काव्य एवं समाज के लिए जो अहितकर एवं अवांछनीय समझा, उनका तीव्र विरोध किया। परिणाम स्वरूप आपको शत्रुओं की कटु आलोचना का सामना करना पड़ा। आर्थिक संकट के बीच में भी, आपने अपनी अडिग आस्था एवं निष्ठा को नहीं छोडा। आपको किसी प्रकार की रूढियाँ या पाबंदियाँ पसन्द नहीं थीं। छंद आदि के बन्धनों से मुक्त होकर आपने 'मुक्त छन्द' में कविता लिखी। यद्यपि आप छायावादी कविता के उन्नायकों में से एक माने जाते हैं, तथापि आपने प्रचुर मात्रा में प्रगतिवादी एवं स्वच्छन्दवादी काव्य की भी रचना की। पतितों एवं दलितों की पीड़ा को भी आपने अपने काव्य में वाणी दी। दुःखों को देखकर आपके संवेदनशील हृदय से जो कविता उमड पडती है, वह काव्य-कला की एक उत्कृष्ट विभूति बन जाती है। आप केवल एक कवि ही नहीं, बल्कि एक कहानीकार, उपन्यासकार एवं निबन्धकार भी हैं। पर आप कवि के रूप में ही अधिक प्रसिद्ध हैं।

निरालाजी का जन्म बंगाल के महिषादल राज्य के मेदनीपुर गाँव में हुआ था। आप मूलतः उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िला के गढकोला ग्राम के रहनेवाले थे। आपका जीवन सदा अभावों एवं संघर्षें में रहा। आपने 'समन्वय' एवं 'मतवाला' पत्रिकाओं का संपादन किया। आपकी भाषा संस्कृत गर्भित खडीबोली

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। बँगला, उर्दू, एवं फारसी शब्द भी आपकी कविताओं में यत्र–तत्र मिलते हैं। आपने हिन्दी छन्दों में कई स्वतंत्र प्रयोग किये। 'अनामिका', 'परिमल', 'गीतिका', 'नये पत्ते', 'अर्चना', 'आराधना' आदि आपके काव्य–संग्रह हैं। 'तुलसीदास' और 'राम की शक्ति–पूजा' आपकी प्रमुख रचनाएं हैं।

निरालाजी की एक अत्यंत लोकप्रिय कविता है "प्रियतम"। इसमें निरालाजी ने भगवान के सबसे प्रिय भक्त के प्रश्न को उठाकर, एक सच्चे भक्त की आधुनिक व्याख्या दी है। यों तो प्रत्येक युग में यह प्रश्न उठाया गया था कि भगवान को सबसे अधिक प्यारा कौन है और वह किससे अधिक प्रसन्न होता है। किसी ने भगवान की प्रसन्नता को जप एवं तप में देखा तो किसी ने उसे पूजा–पाठ में देखा। किसी ने उसे रीति–रस्म के पालन में देखा तो किसी ने उसे सुमिरन एवं स्तुति में देखा। किन्तु भगवान को न तो निशि–दिन स्तुति करनेवाले ऋषि–मुनि ही अधिक पसंद हैं और न ही उसे संन्यास एवं वैराग्य का चोला पहने हुऐ साधु–संत ही अधिक प्यारे हैं। भगवान का प्रियतम तो वह है जो प्रत्येक परिस्थिति में भगवान का स्मरण कर अपने कृत्यों को भगवद् कर्तव्य समझकर उन्हें निष्काम भाव से निष्ठा के साथ करता है। निरालाजी ने प्रस्तुत कविता में यह दिखाया है कि केवल कर्मठ, एवं कार्यनिरत किसान ही भगवान का प्रियतम है जिसमें भक्ति का दिखावा कम किन्तु कर्मण्यता एवं कर्तव्य–पालन की निष्ठा अधिक है।

एक दिन विष्णुजी के पास गए नारदजी,
पूछा, "मर्त्यलोक में वह कौन है पुण्यश्लोक
भक्त तुम्हारा प्रधान ?"
विष्णुजी ने कहा, "एक सज्जन किसान है,
प्राणों से प्रियतम ।"
नारद ने कहा, "मैं
उसकी परीक्षा लूँगा।" हंसे विष्णु सुनकर यह,
कहा कि, "ले सकते हो।"
नारदजी चल दिए,
पहुँचे भक्त के यहाँ
देखा–हल जोत कर आया वह दुपहर को;
दरवाज़े पहुँचकर रामजी का नाम लिया;

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्नान भोजन करके,
फिर चला गया काम पर।
शाम को आया दरवाज़े, फिर नाम लिया;

प्रातःकाल चलते समय
एक बार फिर उसने
मधुर नाम स्मरण किया।
"बस केवल तीन बार"
नारद चकरा गये।–
दिवारात्र जपते हैं नाम ऋषि–मुनि लोग
किंतु भगवान को किसान ही यह याद आया?

गए वह विष्णुलोक,
बोले भगवान से,
"देखा किसान को–
दिन भर में तीन बार
नाम उसने लिया है।"
बोले विष्णु, "नारदजी,
आवश्यक दूसरा
काम एक आया है,
तुम्हें छोड़कर कोई
और नहीं कर सकता।
साधारण विषय यह,
बाद को विवाद होगा;
तब तक यह आवश्यक कार्य पूरा कीजिए;
तैल–पूर्ण पात्र यह
लेकर, प्रदक्षिणा कर आइए भूमण्डल की;

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ध्यान रहे सविशेष,
एक बूँद भी इससे
तेल न गिरने पाए।"
लेकर चले नारदजी,
आज्ञा पर धृतलक्ष-
एक बूँद तेल उस पात्र से गिरे नहीं !"

योगिराज जल्द ही
विश्व-पर्यटन कर के
लौटे वैकुण्ठ को !
तेल एक बूँद भी उस पात्र से गिरा नहीं।

उल्लास मन में भरा था
यह सोचकर, तैल का रहस्य एक
अवगत होगा नया।
नारद को देखकर
विष्णु-भगवान ने
बैठाया स्नेह से,

कहा, "यह उत्तर तुम्हारा यहाँ आ गया।
बतलाओ पात्र लेकर जाते समय कितने बार
नाम इष्ट का लिया?"
"एक बार भी नहीं,"-
शंकित हृदय से कहा नारद ने विष्णु से-
"काम तुम्हारा ही था,
ध्यान उसी से लगा,
नाम फिर क्या लेता और?"

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विष्णु ने कहा, "नारद,
उस किसान का भी काम
मेरा दिया हुआ है,
उत्तरदायित्व कई लादे हैं एक साथ;
सबको निभाता और
काम करता हुआ
नाम भी वह लेता है,
इसी से है प्रियतम !"
नारद लज्जित हुए,
कहा, "यह सत्य है।"

कठिन शब्दार्थ

मर्त्यलोक – भूलोक, पुण्यश्लोक – पुण्यात्मा, चकरा गये – आश्चर्य चकित हुए, दिवारात्र – दिन और रात, तैल-पूर्ण पात्र – तेल भरा पात्र, प्रदक्षिणा कर – चक्कर लगाकर; घूमकर, सविशेष – विशेष रूप से, धृतलक्ष – दृष्टि गाड़कर, अवगत – ज्ञात, मालूम, उत्तरदायित्व – ज़िम्मेदारी, निभाता – निर्वाह करता, प्रियतम – सबसे प्यारा।

• • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

९. ग्रामवधू
सुमित्रानन्दन पंत

श्री सुमित्रानन्दन पंतजी हिन्दी के सुकुमार भावनाओं के कवि माने जाते हैं। आप छायावादी काव्य के आधार-स्तम्भों में से एक है। आपकी काव्य-कला समय के साथ-साथ निरन्तर बदलती रही। आपकी प्रारंभिक कविताओं में प्रकृति एवं सौंदर्य के रमणीय चित्र मिलते हैं। फिर आप छायावाद की ओर मुडे और सूक्ष्म कल्पनाओं एवं सुकुमार भावनाओं से भरी कविताओं की रचना की। बाद में आपने प्रगतिवाद की ओर आकृष्ट होकर, सूक्ष्म से स्थूल को और भावुकता से विचारशीलता की ओर कदम बढाये। आपने शोषण, उत्पीड़न, विषमता, ग्रामीण दुर्दशा आदि को लेकर सुन्दर कविताओं की रचना की। फिर आप प्रयेगवादी बने। अंत में आपने अरविंद-दर्शन से प्रभावित होकर सामाजिक समता, आत्मिक उन्नयन, एवं मानव-कल्याण सम्बन्धी कविताएँ लिखीं। इस प्रकार आपकी कविता में आधुनिक हिन्दी कविता का पूरा युग प्रतिबिम्बित पाया जाता है।

सुमित्रानन्दन पंतजी का जन्म अल्मोड़ा जिले के कौसानी नामक पर्वतीय ग्राम में हुआ था। आपके पिता गंगादत्त पंत वहाँ सरकारी नौकरी करते थे। पतंजी की प्रारंभिक शिक्षा कौसानी और अल्मोंड़ा में हुई। फिर आप प्रयाग के सेंट्रल म्योर कालेज में दाखिल हुए । सन् १९२१ में जब असहयोग आंदोलन छिड़ा तो आपने पढ़ाई छोड़ दी और स्वतंत्र रूप से संस्कृत, अंग्रेज़ी, हिन्दी आदि का ज्ञान प्राप्त किया। 'वीणा', 'ग्रंथि', 'पल्लव', 'गुंजन', 'ग्राम्या', 'स्वर्ण किरण', 'चिदम्बरा' आदि आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। 'चिदम्बरा' पर आपको भारतीय ज्ञान पीठ पुरस्कार मिला था। पंतजी सुमार भावों के कवि हैं और अपने भावों के अनुकूल भाषा गढ़ने में भी आप कुशल हैं। प्रकृति के अत्यंत

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मनोहर शब्द-चित्र आपकी कविताओं में मिलते हैं। आपकी कविता में विचारों और चिंतन की प्रचुरता भी देखने को मिलती है।

प्रस्तुत कविता 'ग्राम वधू' पंतजी की रचना 'ग्राम्या' से ली गयी है। पंतजी उन विरल कवियों में से हैं जिन्होंने अपनी कविताओं द्वारा ग्रामीण जीवन की दूर्दशा की ओर हमारी दृष्टि आकर्षित की। यहाँ पर गाँव के भोलेभाले वातावरण में एक भोली भाली ग्राम वधू का सजीव चित्रण किया गया है।

विवाह के उपरांत किसी भी स्त्री के जीवन में बिदाई का दिन बड़ा कठिन होता है। उस अवसर पर वधू संतोष एवं दुःख के दो राहों पर खडी पायी जाती हैं। उसके मन में एक ओर माता-पिता एवं भाई-बहन को छोड़कर जाने का गम भी रहता हैं। लोक-लाज के भय के कारण वह हर्ष तो प्रकट कर नहीं सकती। उसके लिए बिदाई का दुःख प्रकट किये बिना और कोई मार्ग नहीं रहता है। अतः सभी वधुएं बिदाई पर दिल खोलकर रोती हैं। और ग्राम वधू का तो कहना ही क्या? वह घर पर रोने के अतिरिक्त स्टेशन पर भी रंभाकर रोती हैं। वह माता-पिता, भाई-बहन, बन्धु-सखियों से बारी बारी से गले मिलकर रोती हैं। उसके रुदन को देखकर स्टेशन पर उपस्थित सभी स्त्रियाँ भी रोने लगती हैं। इस रुदन-दृश्य को देखकर रेल-गाड़ी में बैठे सभी यात्री समझ बैठते हैं कि कोई रेल के नीचे दबकर मर गया होगा या पुलिस ने किसी को पकड़ लिया होगा। रेल के चल पड़ने के पहले माँ-बाप वधू को आशीर्वाद देते हैं। सहेलियाँ कहती हैं कि उन्हें भूला नहीं देना। मौसी उसे शीघ्र माँ बनने की कामना करती हैं। रेल चल पड़ती है। सभी अपनी गीली आँखें पोंछते हुए चले जाते हैं।

रेल के चल पड़ते ही ग्राम वधू का रोना हर्ष में परिणत हो जाता है। उसका दबा संतोष फूट पडता है। वह हँस-हँसकर अपने पति से बातें करने लगती हैं। कविता के अंत में कवि पंतजी दार्शनिक भाव से कहते हैं कि इस रूढ़िगत संसार में मनुष्य का रोना और हँसना भी यन्त्रवत् हो गया हैं। सच यह है कि बिदाई के अवसर पर अधिकंश वधुएँ केवल रस्म के पालन के लिए रोने का अभिनय करती हैं।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाती ग्राम वधू पति के घर!
माँ से मिल गोदी पर सिर धर
गा गा बिटिया रोती जी भर,
जन जन का मन करुणा कातर,

जाती ग्राम वधू पति के घर!
भीड लग गयी लो स्टेशन पर,
सुन यात्री ऊँचा रोदन स्वर,
झाँक रही खिडकी से बाहर,

जाती ग्राम वधू पति के घर!
चिन्तातुर सब, कौन गया मर,
पहियों से दब, कट पटरी पर,
पुलिस कर रही कहीं पकड–धर!

जाती ग्राम वधू पति के घर!
मिलती ताई से गा रोकर,
मौसी से वह आपा खोकर,
बारी बारी रो, चुप होकर,

जाती ग्राम वधू पति के घर!
बिदा फूआ से ले हाकार,
सखियों से रो धो बतिया कर,
पडोसिनों पर टूट, रंभाकर,

जाती ग्राम वधू पति के घर!
माँ कहती, – रखना संभालकर
मौसी, – धनि, लाना गोदी भर
सखियाँ, – जाना हमें मत बिसर,

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाती ग्राम वधू पति के घर।
नहीं आँसुओं से आँचल तर,
जन बिछोह से हृदय न कातर,
रोती वह रोने का अवसर,

जाती ग्राम वधू पति के घर।
रोना गाना यहाँ चलन भर,
आता उसमें उभर न अन्तर,
रूढि यंत्र जन जीवन परिकर,
जाती ग्राम वधू पति के घर।

कठिन शब्दार्थ

कातर – व्याकुल, रोदन स्वर – रोने का स्वर, चिन्तातुर – दुःखी, चिन्तित, ताई – बाप के बडे भाई की पत्नी, मौसी – माता की बहन, धनि – वधू, आपा खोकर – सुध–बुध भूलकर, फूआ – पिता की बहिन का पति, लाना गोदी भर – माँ बनकर आना, बिसरना – भूलना, आंचल – वस्त्र का छोर, तर – भीगा, बिछोह = वियोग, परिकर – अनुगत, सहचर।

••••••••••

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

10. अधिकार

महादेवी वर्मा

पीड़ा एवं वेदना की गायिका महादेवी वर्माजी का जन्म ई. 1906 में उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद नगर में हुआ था। बचपन से ही आपको कविता में रुचि थी। आपके पिता गोविंद प्रसाद वर्माजी हेडमास्टर थे और आपकी माता हेमरानी एक विदुषी थीं। केवल नौ वर्ष की अवस्था में ही आपका विवाह हो चुका था। प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम. ए. परीक्षा प्रथम श्रेणी में पासकर आप प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाध्यापिका बनीं। बाद में आप कई वर्षों तक इसी विद्यापीठ के प्रधानाचार्य पद पर भी रहीं।

हिन्दी के छायावादी कवियों में आपका सर्वोच्च स्थान है। आपके काव्य में सर्वत्र अज्ञात एवं अलौकिक प्रियतम के प्रति जिज्ञासा की भावना पायी जाती है। आप मूलतः पीड़ा एवं वेदना की गायिका हैं। आपको आधुनिक मीरा कहने में कोई भी अतिशयोक्ति नहीं है। गेयता, चित्रात्मकता, लाक्षणिकता एवं प्रतीक योजना आपके काव्य की मूल विशेषताएँ हैं। 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'साँध्य गीत', 'यामा' आपके प्रसिद्ध काव्य-ग्रंथ हैं। पद्य के अतिरिक्त आपने कुछ गद्य रचनायें भी की हैं। 'यामा' पर आपको ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ था। प्रस्तुत कविता 'अधिकार' आपकी प्रसिद्ध रचना है।

साधारणतः लोग जीने का अधिकार माँगते हैं। कोई भी मरने का अधिकार नहीं चाहता। किन्तु इस कविता में महादेवी वर्माजी जो अधिकार माँगती है, वह निराले ही प्रकार का है। वह भगवान से जीने के अधिकार के बदले, मर-मिटने का अधिकार माँगती हैं। वह स्वर्ग के सुखवैभव एवं अमरता नहीं चाहती हैं। वह संसार की सभी मिटनेवाली वस्तुओं के बीच रहकर,

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्वयं मर मिटना चाहती हैं। क्योंकि संघर्षशील जीवन में जो स्वाभिमान एवं सात्विक आनंद होता है, वह उपहार के उपलक्ष्य में मिले स्वर्ग में भी नहीं होता है। वह भगवान के दयानुग्रह के रूप में मिलनेवाने वेदना रहित 'अमरों के लोक' को भी ठुकरा कर, मर्त्य जीवन की वेदना एवं अवसाद में अमरता ढूँढने का प्रयत्न करती हैं। वह किसी भी सूरत में संघर्ष पथ पर मर–मिटने के अधिकार को छोडना नहीं चाहती हैं। कवयित्री की जीवन के प्रति यह निष्ठा एवं आत्म–विश्वास ही उनके व्यक्तित्व को एक प्रकार का अनूठापन प्रदान करती है।

वे मुस्काते फूल, नहीं —
जिनको आता है मुरझाना,
वे तारों के दीप, नहीं —
जिनको आता है बुझ जाना।

वे नीलम के मेघ, नहीं —
जिनको है घुल जाने की चाह,
वह अनन्त ऋतुराज, नहीं —
जिसने देखी जाने की राह।

वे सूने से नयन, नहीं —
जिनमें बनते आँसू–मोती,
वह प्राणों की सेज, नहीं —
जिसमें बेसुध पीड़ा सोती।

ऐसा तेरा लोक, वेदना —
नहीं, नहीं जिसमें अवसाद,
जलना जाना नहीं, नहीं —
जिसने जाना मिटने का स्वाद।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार?
रहने दो है देव ! अरे
यह मेरा मिटने का अधिकार।

कठिन शब्दार्थ

सूने – शून्य, नयन – आँख, वेदना – पीड़ा, सेज – शय्या, बेसुध – अचेत, अवसाद – खेद; निराशा, अमरों का – देवताओं का, उपहार – भेंट।

• • • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

11. चाँद और कवि

रामधारीसिंह दिनकर

डॉ. रामधारीसिंह दिनकर हिन्दी के श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। हमारी संस्कृति की प्राचीनता पर उन्हें गर्व है तो नवीनता के प्रति आग्रह। गद्य पद्य के माध्यम से उन्होंने भारतीयता की समर्थ अभिव्यक्ति की है। दिनकर जी की कविताओं में एक ओर क्रांति की आग है तो दूसरी ओर प्रणय का राग है। राष्ट्रीय और सामाजिक दायित्वों से प्रेरित होकर उन्होंने 'रेणुका', 'हुँकार', 'कुरुक्षेत्र', 'रश्मिरथी', 'परशुराम की प्रतीक्षा', जैसी कृतियों की सृष्टि की है तो 'उर्वशी', 'नीलकुसुम जैसी रचनाओं में वे रागात्मक संवेदनाओं में रमते नज़र आते हैं। सौंदर्य-जगत को उद्घाटित करनेवाली उनकी भाषा जन-चेतना की वाहिका है।

'चाँद और कवि' नीलकुसुम काव्य-संग्रह से उद्धृत कविता है। कवि-कलाकारों को स्वप्नदर्शी कहकर यथार्थ-दुनिया से दूर रखने का प्रयास तो देखा जाता है; लेकिन दिनकर की राय में कवि के सपने कठोर-से-कठोर यथार्थ से भी दृढ हैं, मज़बूत हैं। कवि-कलाकारों के सपने ही यथार्थ का रूप धारण करते हैं और उन सपनों की नींव पर ही समाज का भविष्य खडा किया जाता है। स्वर्ग को भी जीतने की प्रेरणा सपनों और अभिलाषाओं से मिलती है।

रात में गगन पर आँखें गडाकर बैठे हुए कवि को लगा कि धरती के मानव की विचित्र आदत को देख आसमान का चाँद भी आश्चर्य में पड जाता है और पूछ लेता है कि यह मानव क्यों स्वयं समस्याएँ बना लेता है और उनमें फँसकर हमेशा बेचैन रहता है। चाँद की दृष्टि में यह मानव पागल

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का सा जीवन बिता रहा है और चाँदनी में बैठ सपनों पर हस्ताक्षर करता है। पानी के बुलबुलों की तरह आदमी के स्वप्न बनते और टूटते हैं। बुलबुलों से खेलकर कविता लिखनेवाले मानव का, चांद उपहास करता है। चांद की व्यंग्य भरी वाणी सुनकर कवि चुप रहे, लेकिन उनका कवि–मन मुखर उठा। अपने को केवल पानी या पानी के बुलबुले मानना उन्हें स्वीकार नहीं। कवि–मन अपने में जो आग पाता है, अन्यत्र दिखाई नहीं देती। उस आग में सपनों को गलाकर वह लोहा बना लेता है और उस लोहे पर नव–निर्माण की नींव खडा कर देता है। मनु–पुत्र मानव में असीम शक्ति, उसकी कल्पना तेज धार वाली होती है। विचारों के हाथों में ही नहीं, सपनों के हाथों में भी तीक्ष्ण तलवार रहती है। शक नही कि स्वप्नवाले ये एक–न–एक़ दिन स्वर्ग को भी जीत लेंगे।

रात यों कहने लगा मुझसे गगन का चाँद,
आदमी भी क्या अनोखा जीव होता है !
उलझनें अपनी बनाकर आप ही फँसता,
और फिर बेचैन हो जगता, न सोता है। (१)

जानता है तू कि मैं कितना पुराना हूँ?
मैं चुका हूँ देख मनु को जनमते मरते;
और लाखों बार तुझ–से पागलों को भी
चाँदनी में बैठ स्वप्नों पर सही करते। (२)

आदमी का स्वप्न ? है वह बुलबुला जल का,
आज बनता और कल फिर टूट जाता है,
किन्तु तो भी धन्य ठहरा आदमी ही तो !
बुलबुलों से खेलता, कविता बनाता है (३)

मैं न बोला, किन्तु मेरी रागिनी बोली,
चाँद फिर से देख, मुझको जानता है तू ?
स्वप्न मेरे बुलबुले हैं ? है यही पानी ?
आग को भी क्या नहीं पहचानता है तू ? (४)

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मैं न वह जो स्वप्न पर केवल सही करते,
आग में उसको गला लोहा बनाती हूँ;
और उस पर नींव रखती हूँ नये घर की
इस तरह, दीवार फौलादी उठाती हूँ। (५)

मनु नहीं, मनु–पुत्र है यह सामने, जिसकी
कल्पना की जीभ में भी धार होती है;
बाण ही होते विचारों के नहीं केवल,
स्वप्न के भी हाथ में तलवार होती है (६)

स्वर्ग के सम्राट को जाकर खबर कर दे,
रोज ही आकाश चढ़ते जा रहे हैं ये;
रोकिए, जैसे बने, इन स्वप्नवालों को
स्वर्ग की ही ओर बढ़ते आ रहे हैं ये (७)

कठिन शब्दार्थ

अनोखा – Wonderful, uncommon, उलझनें – Complications, फँसना – to be entrapped, to be involved in a difficulty, बेचैन – restless, जगना – to be awake सही करना – हस्ताक्षर करना, बुलबुला – a bubble, आग – Fire, गलाना – to melt, नींव – foundation, फौलादी – made of steel, धार – edge, खबर करना – to report, रोकना – to stop.

••••••••••

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

12. दिन जल्दी-जल्दी ढलता है

डॉ. हरिवंशराय 'बच्चन'

हिन्दी में हालावादी काव्य के प्रवर्तक डॉ. हरिवंशराय 'बच्चन' जी का जन्म सन् 1907 ई. में प्रयाग में हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से एम. ए. करने के उपरान्त आपने अध्यापन का कार्य प्रारंभ किया था। पढने-लिखने में आप कुशाग्र थे। कविता, संगीत और चित्रकला की ओर आपकी रुचि आरम्भ से ही थी। हिन्दी के प्रति आपको विशेष अनुराग था। प्रयाग विश्वविद्यालय में पढते समय ही आप अपनी कविताएँ गाकर विद्यार्थियों के हृदय को जीत लिया करते थे। आपने कुछ वर्षों तक 'आकाश वाणी' में और भारत के विदेश मंत्रालय में भी काम किया था।

फारसी के प्रसिद्ध कवि उमर खय्याम के प्रभाव में आकर आपने मस्ती, यौवन एवं मादकता भरे कई मौलिक एवं अनूदित गीत-काव्य लिखे। हिन्दी भाषा, भावना, कल्पना एवं शैली में नवीन प्रयोगकर, आपने हिन्दी काव्य को नये रूप एवं नये भाव प्रदान किये। आपने अपनी कविताओं में केवल प्रेम एवं प्रणय के गीत ही नहीं गाये हैं, अपितु समसामयिक धार्मिक संकीर्णता एवं दूषित सामाजिक व्यवस्था पर भी अपना आक्रोश प्रकट किया है। 'मधुबाला', 'मधुशाला', 'मधु कलश' आदि आपके प्रसिद्ध काव्य-ग्रंथ हैं।

'दिन जल्दी-जल्दी ढलता है' आपकी एक सुरुचिपूर्ण लघु कविता है। 'यह सच है कि मानव जीवन प्यार की डोर से बंधा हुआ है। स्नेह एवं प्या. जीवन को गति एवं चेतना प्रदान करते हैं। वे जीवन में उत्साह

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एवं उमंग भर देते हैं। किन्तु जिसका जीवन स्नेह से वंचित है, उसमें निराशा एवं शिथिलता घर कर लेती हैं। वह निरुत्साहित एवं निस्तेज हो जाता है क्योंकि उसे चाहनेवाला और उसकी प्रतीक्षा करनेवाला कोई नहीं है। दिन ढलने पर पथिक अपनी मंजिल की ओर, चल पड़ता है और पक्षी अपने घोंसलों की ओर तेज़ गति से उडने लगते हैं। किन्तु कवि की प्रतीक्षा करनेवाला कोई नहीं है। यह सोचकर कवि का दिल विह्वल हो उठता है और उसकी पद-गति धीमी पड़ जाती है। इस कविता का आशय यह भी हो सकता है कि जीवन-रूपी संध्या में हमारा चाहनेवाला कोई नहीं होता है और इस कारण हमारा जीवन शिथिल हो जाता है।

(१)

दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।
हो जाय न पथ में रात कहीं,
मंजिल भी तो है दूर नहीं—
यह सोच थका दिन का पंथी भी जल्दी-जल्दी चलता है।
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।

(२)

बच्चे प्रत्याशा में होंगे;
नीड़ों से झाँक रहे होंगे—
यह ध्यान परों में चिड़ियों के भरता कितनी चंचलता है।
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(३)

मुझ से मिलने को कौन विकल?
मैं होऊँ किस के हित चंचल?—
यह प्रश्न शिथिल करता पद को; भरता उर में विह्वलता है।
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।

कठिन शब्दार्थ

ढलना - बीत जाना, दिन ढलना - संध्या होना, पथ - रास्ता, मंजिल - लक्ष्य स्थान, पंथी - यात्री, प्रत्याशा - प्रतीक्षा, इन्तज़ार, नीड़ - घोंसला, झाँकना - to peep, पर - पंख, विकल - व्याकुल।

....

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

13. मेरा जीवन

सुभद्राकुमारी चौहान

सुभद्राकुमारी चौहान जी हिन्दी की प्रसिद्ध कवयित्री हैं जिनके काव्य में एक ओर वीर-रस-प्रधान देश-भक्ति भावना पायी जाती है तो दूसरी ओर वात्सल्य-रस-प्रधान मातृ-स्नेह का संचार मिलता है। आपका जन्म 1904 ई. में इलाहाबाद में हुआ था। आपके पिता ठाकुर रामनाथ सिंहजी एक सहृदय आदमी थे। बचपन में ही आपका विवाह ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान के साथ हुआ था। गाँधीजी के असहयोग आंदोलन में पड़कर आपने अपनी पढाई छोड दी और देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लिया। इसी काल में आपका परिचय श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी से हुआ और इन्हीं के प्रोत्साहन से आप कविता करने लगीं। सन् 1948 में एक मोटर-दुर्घटना में आपकी अकाल मृत्यु हुई।

आपके काव्य को तीन भागों में बाँट सकते हैं — (1) देश-भक्ति-प्रधान। (2) मातृत्व प्रधान और (3) प्रणय प्रधान। आपकी कविताओं में वीर रस एवं वात्सल्य रस का गंगा-जमुना का-सा संगम पाया जाता है। 'आपकी कविता "झांसी की रानी" में आपका मर्दानी रूप मिलता है तो 'मेरा बचपन' में आपके मातृ-रूप के दर्शन होते हैं। भाषा एवं भाव की सहजता, सरलता एवं सरसता आपके काव्य की प्रधान विशेषताएँ हैं। 'मुकुल' और 'त्रिधारा' आपके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं।

'मेरा जीवन' आपकी प्रसिद्ध कविता है। इसमें आपका आशावादी स्वर मुखरित पाया जाता है। मानव-जीवन आशा एवं निराशा के दो रंगों रंगा पाया जाता है। किसी ने ठीक ही कहा है कि आशावादी लोग जीवन-रूपी

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पेड़ पर केवल फूल देखते हैं, किन्तु उसके काँटों को नहीं। निराशावादी लोगों की दृष्टि केवल काँटों पर जाती है, किन्तु उसके फूलों पर नहीं। आशावादी कवयित्री की दृष्टि में जीवन ससुख एवं संतोष का सागर है। उसमें दुःख एवं दर्द के लिए कोई स्थान नहीं है। कवयित्री के लिए जीवन उत्साह एवं उमंग का स्रोत है, निरुत्साह एवं निराशा का साधन नहीं। कवयित्री कहती है कि आशा की आधार-शिला पर खडा हुआ उसका जीवन-रूपी भवन आत्म-विश्वास, विश्व-प्रेम एवं निर्भीकता से सशक्त एवं सुदृढ़ है। कविता के अंत में कवयित्री अपना अबोध आश्चर्य प्रकट करती है कि क्यों लोग संसार को असार एवं जीवन को निस्सार समझते हैं।

कविता की भाषा अत्यंत सरल और भाव सुबोध एवं स्पष्ट हैं।

मैं ने हँसना सीखा है
मैं नहीं जानती रोना ;
बरसा करता पल-पल पर
मेरे जीवन में सोना ।

मैं अब तक जान पाई
कैसी होती है पीड़ा ;
हँस-हँस जीवन में कैसे
करती है चिन्ता क्रीड़ा ।

जग है असार सुनती हूँ
मुझको सुख-सार दिखाता
मेरी आँखों के आगे
सुख का सागर लहराता ।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कहते हैं होती जाती
खाली जीवन की प्याली
पर मैं उसमें पाती हूँ
प्रतिपल मदिरा मतवाली।

उत्साह, उमंग निरन्तर
रहते मेरे जीवन में
उल्लास विजय का हँसता
मेरे मतवाले मन में।

आशा आलोकित करती
मेरे जीवन को प्रतिक्षण
हैं स्वर्णसूत्र से वलयित
मेरी असफलता के धन।

सुख–भरे सुनहले बादल
रहते हैं मुझको घेरे;
विश्वास, प्रेम, साहस हैं
जीवन के साथी मेरे।

कठिन शब्दार्थ

पल–पल पर – प्रतिक्षण, प्याली – Cup, आलोकित करती – प्रकाशवान करती, घन – बादल, सुनहले – स्वर्णिम, साथी – मित्र।

• • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

14. लोग

शंभूनाथ सिंह

आधुनिक हिन्दी कवियों में श्री. शंभूनाथ सिंह का विशेष स्थान है। वे नये कवि हैं और उनकी कविताएँ नई बौद्धिक चेतना से संपृक्त हैं। वे सामाजिकता को नकारनेवाले नहीं, वैयक्तिकता को भी। मानवजीवन की विसंगतियों पर प्रकाश डालने में वे सक्षम हैं। उन्होंने देखा कि लोग संपन्नता में भी विपन्नता का अनुभव करनेवाले हैं। आधुनिक जीवन में मानव ने बहुत सी मूल्यवान चीज़ों को खो दिया है। मानवता विनष्ट होती ही जा रही है। लेकिन इस हानि के प्रति बोधवान होते हुए भी वह निस्संग भाव से देखता ही रहता है। कवि ने ऐसे मनुष्य को प्रस्तुत किया है।

आधुनिक जीवन की विसंगतियों का स्थूल लेकिन प्रभावशाली चित्र अंकित करते हुए कवि कहता है कि लोग यों ही हँसनेवाले नहीं हैं, उनकी हँसी भेदभरी है। ये हँसते हुए दूसरों पर छुरी चलाते हैं। मीठी मुस्कान से आन्तरिक भावों को छिपा लेते हैं। लेकिन, वे निस्संग हैं। उनकी ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। सर्वनाश को निकट पाकर भी उससे बचने की कोशिश नहीं करते। वह इसप्रक़ार है जिसप्रकार कोई विषकन्याओं के अधरों से निकलती विषधारा को अधरसुधा मानकर पी लेता है; उनकी विषैली, वासनाभरी दृष्टियों पर मोहित होकर उनसे प्रेम करता है, स्वयं मृत्यु का वरण कर लेता है। वह इसप्रकार है जिसप्रकार कोई नागफनी जैसे कांटेदार पौधों को भी कसकर पकड़ लेता है।

नगरवासियों पर व्यंग्य करते हुए कवि कहता है कि लोग नगरों की दीवारों में फँसे हुए हैं। वे दंड भोगनेवाले हैं, लेकिन जानते नहीं कि जुर्म

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्या है। वे अपने व्यक्तित्व को खो बैठे हैं। आपसी संबन्धों से भी वंचित हैं। खुद जाल बुनते हैं, खुद ही फँस जाते हैं।

देश की बिगड़ी हुई हालत पर विचार करते हुए कवि शंभूनाथ सिंह ने देश की तुलना जलते जंगल से की है। सांप्रदायिकता से प्रेरित दंगा–फसाद के कारण देश जंगल के समान जल रहा है। घर–घर में आपसी रिश्तों का कोई महत्व नहीं। ममता एवं प्रेम का कोई स्थान नहीं। इन पागल खानों में, भुतहे इमारतों में लोग बसते हैं।

अनजान में लोग दूसरों को पैरों से कुचला देते हैं। जिसप्रकार लोग जलन से मुक्त होने के लिए पानी में कूद पड़ते हैं, और डूब मरते हैं, उसी प्रकार एक से बचने के लिए दूसरे में फँस जाते हैं।

लोग अपनी असलियत को छिपाकर रखते हैं। वे अपनी बुरी वृत्तियों को रोकने में असमर्थ हैं, लेकिन, छिपा तो लेते ही हैं। एक दूसरे को खा जाते हैं।

सो न हँसी हँसते हैं लोग।
हंस–हंस कर डँसते हैं लोग।

रस की धारा झरती है
विष पिये हुए अधरों से।
बिंध जाती भोली आँखें
विष कन्या की नज़रों से।

नागफनी की बाहों में।
हँस हँस कर कसते हैं लोग।

चुन दिये गये हैं जो लोग
नगरों की दीवारों में,

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

खोज रहे हैं अपने को
वे ताज़ा अखबारों में।

अपने ही बुने जाल में
हँस हँस कर फँसते हैं लोग।
जलते जंगल जैसे देश
और कत्लगाह से नगर,
पागल खानों सी बस्ती
चीरफाड़घर जैसे घर।

भूतों के महलों में
हँस हँस कर बसते हैं लोग।

रौंद रहे हैं अपनों को
सोये सोये चलते से,
भाग रहे पानी की ओर
आगजली में जलते से।

भीडों के इस दल दल में
हँस हँस कर धँसते हैं लोग।

हम तुम वे और ये सभी
लगते कितने प्यारे लोग।
पर कितने तीखे नाखून
रखते हैं ये सारे लोग।

अपने खूनी दाढ़ी में
हँस हँसकर ग्रस्ते हैं लोग।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

टिप्पणी

विषकन्या – वह स्त्री जिसके शरीर में इस आशय से विष प्रविष्ट कर दिए गए हों, कि जो उसके साथ संभोग करे, वह मर जाय। प्राचीन भारत में शत्रुओं को धोखे में डालकर मार देने के लिए विषांगनाओं की सहायता ली जाती थी। विशेष दवाओं का सेवन कराकर लड़कियों को विषकन्या बना लेते थे।

दीवार में चुनना – किसी मनुष्य को खड़ा करके उसके चारों ओर और ऊपर ईंटों की जोड़ाई करना, ताकि वह दम घुटकर मर जाय। मुगलों के शासन काल में ऐसा दंड दिया जाता था।

नागफनी – एक काँटेदार पौधा। (कैक्टेस)

• • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

15. जीवन रहस्य

जगदीश चन्द्र 'जीत'

श्री जगदीश चन्द्र 'जीत' हिन्दी के आधुनिक युवा-पीढी के अत्यन्त लोकप्रिय कवि हैं। आपका जन्म 1934 ई. में पश्चिमी पाकिस्तान के दरा इस्माईल खाँ नामक स्थान में हुआ था। 1947 ई. में देश विभाजन के समय उनके परिवार के लोग दिल्ली आए और वहीं ठहरने लगे। पाकिस्तान में उनकी प्रारंभिक शिक्षा हुई। उन्होंने वहाँ हिन्दी, उर्दू फारसी, अंग्रेज़ी तथा संस्कृत का अध्ययन किया था। आपने मेरठ विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिन्दी) परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। बचपन से ही साहित्य सृजन में उनका मन लगा हुआ था। अब आप केन्द्रीय साहित्य अकादमी में काम करते हैं।

जगदीश चन्द्र 'जीत' की कविताएँ सरलता तथा कोमलता से अत्यन्त रोचक हैं। सहज अभिव्यक्ति, भावना तथा कल्पना की कुदानें, जीवन के कोमल पक्ष के चित्रण, आदि उनकी कविताओं की विशेषताएँ हैं। ललित कोमल शैली एवं सरल भाषा में लिखी उनकी सारी कविताएँ बहुत लोकप्रिय हो गयी हैं। उनकी शिल्पविधि चित्रोपम है। गान्धीवादी सिद्धान्त से उनका मन लगा हुआ है। उनकी समस्त रचनाओं में उनका ललित जीवन और रोचक व्यक्तित्व झलकता है। वस्तुतः नयी कविता के योग्य नई काव्य भाषा के गढ़न में उनका योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

उनके काव्य संग्रह हैं – नारीः एक प्रश्न, युग पुरुष। बदलते भाव उभरते स्वर आदि।

प्रस्तुत कविता 'जीवन रहस्य' में कवि 'जीत' समझाते हैं कि आधुनिक काल में मनुष्य किसी न किसी मार्ग के द्वारा दूसरों को पीछा करके आगे बढ़ने

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की कोशिश करते हैं। जो कोई तकलीफें सहकर धक्का–मुक्की से आगे बढने की कोशिश करता है, वही जीवन में विजयी हो सकता है। उनका मत है कि इस दुनिया में हर क्षेत्र में पतिद्वन्द्विता प्रतिदिन बढ़ती जाती है। इस प्रतिद्वन्द्विता में विजयी होकर आगे बढने का परिश्रम ही जीवन का रहस्य है। समुद्र की लहरों के दर्शन करने के बाद 'जीत' के मन में जो भाव तरंगें उठीं, उसकी प्रतिक्रिया 'जीवन रहस्य' कविता के द्वारा व्यक्त हुई है।

मौंन खड़ा रहता हूँ किनारे पर,
और . . . .
देखता रहता हूँ
इन उठने वाली असंख्य लहरों को,
जो निरन्तर खेलती रहती है
सागर की छाती पर
एक के बाद एक,
बढ़ती आती हैं
तीव्र वेग से,
उठती, उभरती,
और छलांगे भरती।
मानों प्रत्येक इसी कोशिश में रत है,
कि . . . . आगे ही आगे निकलती जाये
एक दूसरी से।
ओह . . . . . .
यह कैसी आपा – धापी
यह कैसी प्रतिद्वन्द्विता की भावना
जहाँ देखो, जिधर देखो,
दूसरों को पीछे छोड़,
स्वयं आगे बढ जाने का शोर,
युगोंयुगों से अनन्त काल से सुनता आ रहा हूँ।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आश्चर्य । कोई भी रुक कर,
दम लेने की बात नहीं करता,
जो भी पीछे से आता है,
धक्का-मुक्की से,
आगे बढने की कोशिश करता है।
शायद जीवन का रहस्य यही है,
जो सबको पीछे छोड़ता हुआ आगे बढ़ जाये,
जगत में सफल वही है।

कठिन शब्दार्थ

असंख्य - अनेक, लहर - वीचि തിരമാല छलांगें भरना - कूदना, रत - लीन, प्रतिद्वन्द्विता - प्रतिस्पर्धा , Competetion.

• • • • • • • • • •

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

DEPARTMENT OF PUBLICATIONS
UNIVERSITY OF KERALA
THIRUVANANTHAPURAM